ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 206-208

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-II, Issues-20, YEAR- June-2021

प्रभा खेतान की औपन्यासिक कथा–यात्रा

डॉ0 निमिषा सिंह

Email- aaryvart2013@gmail.com

Received- 06.06.2021, Revised- 10.06.2021, Accepted - 14.06.2021

सारांश : ***'प्रभाखेतान का औपन्यासिक लेखन स्त्री अस्मिता की खोज है। स्त्री के हक को लेकर वे बराबर चिंतित रही हैं। दर्शन शास्त्र की विदुषी होने के कारण कई बार उन्होंने दार्शनिक अन्दाज में स्त्री को समझने और परिभाषित करने की कोशिश की है। अपने एक लेख में उन्होंने इस सवाल पर विचार करते हुए लिखा है– "स्त्री सिर्फ कामना की वस्तु नहीं है, बल्कि एक व्यक्ति और अपने बारे में समाज से खुली बहस चाहती है। इस दिशा में मैं महात्मा गाँधी, अरविन्द, विवेकानन्द या स्वामी दयानन्द के स्वतंत्र विचार, चिंतन को नकार नहीं रही, मगर दूसरी और स्थिति क्या है? दर्शन और शास्त्रों की टीका तथा व्याख्याएँ, सुरेन्द्रनाथ दासगुप्ता, सर्वपल्ली राधाकृष्णन, हिरियन्ना आदि दर्शनशास्त्र के पण्डित, यदुनाथ सरकार, नीलकंठ शास्त्री आदि इतिहास के जानकार, सुनीति कुमार चटर्जी जैसे भाषाशास्त्री, पांडुरंग वामन काणे और सुशीलकुमार डे जैसे काव्यशास्त्री या संस्कृत साहित्य का इतिहास लिखने वाले या फिर अर्थशास्त्र या राजनीतिशास्त्र के भारतीय बौद्धिक विद्वान या तो लोकतांत्रिक पाश्चात्य चिंतन और उसके सुधारवादी दृष्टिकोण से ही आक्रांत रहे या फिर वही प्राचीन शास्त्रीय परम्परावादी श्रद्धा को सिद्ध करते रहे। इन विकल्पों से परे जाकर या उनसे मुक्त रहकर वे स्त्री के संदर्भ में कोई स्वतंत्र मौलिक और यथार्थ व्याख्या से नहीं कर पाए। समस्या पर सवाल उठाते ही मर्यादा की यथास्थिति को बचाए रखने के लिए पुरुषों का धर्मक्षेत्र वास्तव में कुरुक्षेत्र बन जाता है। स्त्री को मानवीय दर्जा देने, समान हक के पक्षधर पुरुष भी अपने बचाव में उन्हीं परम्पराओं वैशाखियों का सहारा लेने लगते हैं, जिसके खोखलेपन से हम सभी परिचित हैं।"***

कुंजीभूत शब्द– विदुषी, शास्त्रीय, श्रद्धा, आक्रान्त, यथार्थ, अस्मिता।

प्रभा खेतान ने हिन्दी कथा साहित्य को कुल 8 औपन्यासिक कृतित्व दिये हैं। आओ पे पे घर चलें (सन् 1990 ई0) प्रभाजी की प्रथम औपन्यासिक कृति है। इसमें लेखिका ने लॉस एंजिल्स, सेंट लुईस, और न्यूयार्क जैसे तीन अमेरिकन शहरों में रहने वाले अपने अनुभव के आधार पर अमरीकी औरत के जीवन के भयानक सच का उद्घाटन करने का प्रयास किया है। मिसेज डी. मिसेज हेल्गा बेरी, कैथी, मरील और क्लारा ब्राउन जैसी अमेरिकन स्त्रियों के जीवन संदर्भों को संवेदनशीलता के साथ लेखिका ने इस उपन्यास में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उपन्यास की कथाभित्ति में एक रेखा चित्र मिलता है कि सत्तर वर्षीय श्री आइलिन दो पतियों और पाँच प्रेमियों को याद करती हुई कुत्ते 'पे पे' को बेटा मानकर अपने जीवन को दुखात्मक हिस्से को भूलना चाहती है। एक जानवर में आदमी को देखती हुई स्वयं को प्यार करती है।

दरअसल, 'आओ पे पे घर चलें' का वस्तु–विन्यास और कथ्य बड़ा धार्मिक है। शिल्प संयोजन अभिनव है। यह कथा सिर्फ अमरीकी औरत की नहीं, अपितु वैश्विक स्त्री की कथा है। प्रभा खेतान का दूसरा उपन्यास तालाबंदी सन् 1991 में प्रकाश में आया। इसमें व्यावसायिक जगत् की कहानी कही गयी है। उपन्यास में एक परिश्रमी किन्तु साधनहीन व्यवसाय कुशल किन्तु मारवाड़ी बनिया श्याम बाबू द्वारा एक फैक्ट्री के स्थापित करने, उसे समृद्धि तक पहुँचाने और अन्ततः बन्द होने क कहानी कही गयी है। उपन्यास के कथासूत्रों से पता चलता है कि उपन्यास के नायक श्याम बाबू और कोई नहीं स्वयं प्रभा जी ही हैं। इस कथाकृति में मार्क्सवादी राजनीति का दिलचस्प स्वरूप उभारा गया है। बंगाल में मार्क्सवादी सोच के चलते एक के बाद एक फैक्ट्रियाँ बन्द होती जा रही है। वहाँ यूनियनबाजी अधिक है। मजदूरों के पक्ष में खड़ा होकर लीडर, वकील और कभी–कभी पुलिस भी पैसा ऐंठने से बाज नहीं आते। परिणामतः उद्योगपति फैक्ट्री बन्द करके या तो दूसरा धन्धा शुरू कर लेते हैं या फिर अन्य स्थान पर अन्य नाम से उसी फैक्ट्री की शुरूआत करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक प्रतिद्वन्द्विता के इस युग में यदि भारतीय उद्योगपति बन्द होते रहे, उद्योगपति तंग किये जाते रहे, यूनियन नेता मजदूरों की संस्कृति के साथ घिनौना खेल खेलते रहे तो यह सच है कि देश आर्थिक दृष्टि से कमजोर होगा। मजदूरों की रोजी–रोटी के सामने समस्याएँ खड़ी होंगी। इन संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में तालाबंदी जैसा उपन्यास अधिक पठनीय और विवेचनीय हो जाता है, फैक्ट्रियों में तालाबंदी तीन तरह से होती है–एक तो यूनियन परस्त मजदूरों द्वारा, दूसरे सरकार के अदूरदर्शी हस्तक्षेप के कारण और तीसरे परिस्थितिजन्य विवशता से ऊबकर स्वयं उद्योगपति अथवा मालिक द्वारा। प्रभा खेतान ने बंगाल की फैक्ट्रियों के, उनके उद्योगपतियों को, मार्क्सवादी नेताओं को और देश की आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर इस उपन्यास का ताना–बाना बुना है।

सन् 1992 में प्रकाशित 'अग्निसंभवा' उपन्यास हंस पत्रिका में छपा था। चीनी महिला पर आधारित यह उपन्यास देशप्रेम की कहानी कहता है। इसकी

एसो0 प्रो0 – हिन्दी, जे.वी. महाजन डिग्री कॉलेज, चौरी चौरा, गोरखपुर (उ0प्र0) भारत

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-II, Issues-20, YEAR- June-2021

नायिका आई.वी. एक चीनी स्त्री है जिसे अपने देश से अटूट प्रेम है। इस कृति में लेखिका ने इस कथासूत्र को हाईलाइट किया है कि किस तरह साधारण चीनी किसान की बेटी आई.वी. संघर्षमय जीवन जीकर हांगकांग की ब्रान्च मैनेजर बन जाती है। कथा लेखिका ने इस कृति में चीनी क्रान्ति, मार्क्सवादी दृष्टिकोण और गोरी जाति के शोषण की तथा राजनीतिक घटनाक्रमों की विश्लेषणपरक कहानी भी कही है। उसमें लेखिका की प्रमुख कोशिश वैश्विक क्षितिज पर स्त्री के संघर्ष को मुखरित करना है। उन्होंने इस उपन्यास के माध्यम से कहना चाहता है कि यदि स्त्री द्वारा यह ठान लिया जाए कि वह असम्भव को सम्भव बना सकती है तो कोई दो मत नहीं उसे सफलता अवश्य मिलेगी। जो कार्य संकल्प के साथ भारतीय मारवाड़ी की बेटी कर सकती है, सही कार्य चीन की मामूली किसान की बेटी भी स्त्री में आग्निक शक्ति है। उसमें दैवीय तेज है। वह प्रज्वलित होकर आलोक की एक नई दुनिया निर्मित कर सकती है। वह अग्निगर्भा है। प्रकाश का उदय वहीं से होता है। स्त्री शक्तिमयी है, वह चाहे जिस देश की हो।

स्त्री–विमर्श पर केन्द्रित उपन्यास 'छिन्नमस्ता' का प्रकाशन सन् 1993 में हुआ। यह मनोवैज्ञानिक परम्परा में लिखा जाने वाला आत्मकथात्मक उपन्यास है। आरम्भ में इसे उपन्यास की जगह आत्मकथाकृति ही समझा गया था। वैसे मनोवैज्ञानिक धरातल पर उतर कर लिखे गये उपन्यास प्रायः आत्मकथापरक ही होते हैं, जैसे–हिन्दी में जैनेन्द्र का 'त्यागपत्र' और अज्ञेय का 'शेखर एक जीवनी' "छिन्नमस्ता एक ऐसी नारी की संघर्षगाथा है, जो पुरुष–प्रधान समाज में पुरुष वर्चस्व के विरुद्ध अपनी पहचान बनाने के लिए 'छिन्नमस्ता' बन जाने में आत्मसम्मान का अनुभव करती है। यह विचार का विषय रहा है कि पुरुष ने अर्थ और सेक्स इन दोनों धरातलों पर स्त्री का निरन्तर शोषण किया है। औपन्यासिक कृति 'छिन्नमस्ता' की कथानायिका प्रिया इन दोनों की मोर्चों पर पुरुष के एकाधिकार और शोषण–विचार से मुक्ति चाहती है। वह पुरुष का गुलाम बनकर नहीं, अपितु अपने मनोराज की रानी बनकर जीना चाहती है।"[2]

'अपने अपने चेहरे' का प्रकाशन 1994 में हुआ है। सही अर्थों में इसे प्रभा खेतान की आत्मकथा का अधूरा अंश माना जाता है। इसकी नायिका 'रमा' है। इस उपन्यास में विवाह, प्रेम, पति, बच्चे आदि से अलग हटकर प्रभा खेतान ने 'स्त्री–अस्तित्व' को पहचानने की कोशिश की है। उन्होंने यह बतलाने की कोशिश भी की है कि स्त्री द्वारा की जाने वाली खोज में मात्र पुरुष ही नहीं हैं, उसे स्वयं को भी खोजना है।

'अपने अपने चेहरे' एक समृद्ध मारवाड़ी परिवार की अंतरंग कथा का दस्तावेज है। परिवार के मुखिया राजेन्द्र गोयनका की पत्नी फूहड़ और गँवार है। फलतः उनके जीवन में एक सुशिक्षित और सम्भ्रान्त आधुनिक महिला रमा का आगमन होता है। रमा गोयनका के उद्योगतंत्र को संभालती ही है, उनकी सभी भावनाओं को तुष्ट भी करती है, परन्तु विडम्बनापूर्ण परिणाम सामने आता है कि दोनों में से एक भी सुखी नहीं है। दोनों ही अपने को उपेक्षित अनुभव करते हैं। यद्यपि रमा मिस्टर गोयनका से प्रेम करती है लेकिन 'दूसरी औरत' होने के कारण समाज में हेय दृष्टि से देखी जाती है। यह सामाजिक मनोविज्ञान का तकाजा है कि किसी पति की पहली औरत भले ही अपने पति से प्यार न पाए, परन्तु उसके सिर पर लगा प्रथम सिन्दूर समाज में सदा चमकता रहता है। 'दूसरी औरत' उस सामाजिक सम्मान से सदा वंचित रहती है। वास्तव में 'अपने अपने चेहरे' का पूरा इतिवृत्ति मनोवैज्ञानिक है। सामाजिक और पारिवारिक मनोदशा का इसमें रेखांकन हैं 'दूसरी स्त्री' होने के कारण रमा की अन्तर्द्वन्द्वमयी पीड़ा का संवेदनशील वृतान्त है। आत्ममन्थन करती हुई रमा तार–तार होकर फिर से जीने की कोशिश करती हैं चाहे मारवाड़ी परिवार की महिला विशेष की कथा इसे समझा जाए अथवा सम्पूर्ण महिला–समाज की आत्मकथा। लेखिका ने समाज की इस कथा को सजीवता के साथ आख्यान देने का प्रयास किय है। पुरुष–प्रधान समाज में हर वर्ग की नारी को अन्ततः उपेक्षित, आहत और अपमानित होना पड़ता है। अगर स्त्री इस सामाजिक जाल से मुक्त होना चाहती है तो उसमें हर्ज क्या है? इस उपन्यास का सच एक परिवार में होने वाली समस्याओं का दर्शनशास्त्र है। मानो प्रभा जी ने इस कृति के बहाने तमाम अमीर परिवारों, उनके मुखिया, उनकी स्त्रियों के निजी संसार को बेबाकी के साथ कह डाला हो।

सन् 1994 में प्रकाशित प्रभा खेतान का 'एड्स' नामक उपन्यास तत्कालीन एक बड़ी वैश्विक समस्या का रेखांकन करने के उद्देश्य से सामने आया। उसका प्लाट तो कहानी का है, परन्तु खेतान ने स्वयं ही इसे उपन्यास बताया है।

'पीली आँधी' सन् 1996 में प्रकाशित प्रभा खेतान की सर्वाधिक चर्चित औपन्यासिक कृति है। प्रौढ़ अनुभव के साथ, परिपक्व, चिन्तन लेकर और व्यवस्थित कथाभाषा में ढालकर प्रकाश लाया गया यह उपन्यास प्रभा खेतान को लेखन की दुनिया में यशस्वी बनाने में अधिक सहायक बना है। कथा का कालखण्ड 1932 से 1950 के बीच से शुरु हुआ होता है। यह वह समय था जब भारत ब्रिटिश उपनिवेशवाद से आक्रान्त था। राजाओं और सामन्तों के अत्याचारों से मारवाड़ी बनिये अपनी धरती छोड़कर बंगाल और बिहार की ओर पलायन कर रहे थे। कोलयारी का धन्धा करते हुए अपने मूल देश राजस्थान की माटी की गन्ध नहीं भूल रहे थे। वास्तव में पीली आँधी संयुक्त परिवार को न टूटने देने की जिद में घर की स्त्रियों के आन्तरिक घुटन और आन्तरिक कलह से उपजी क्रिया–प्रतिक्रिया की कथा है। एक वरिष्ठ आलोचक ने 'पीली आँधी' पर दृष्टिपात करते हुए लिखा है, 'पीली आँधी' में मारवाड़ की समान्तीय

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-II, Issues-20, YEAR- June-2021

व्यवस्था के उत्पीड़न और अकाल से त्रस्त मारवाड़ी जाति का कलकत्ता आने और इस बेगानी धरती पर अनेक अवरोधों–विरोधों के बावजूद अपने श्रम एवं व्यापार–कुशलता के बल पर व्यवस्थित और समृद्ध होने का अत्यन्त विश्वसनीय चित्रण किया गया है, यही नहीं, इस पूरे दौर में समय के साथ इस जाति की मानसिकता एवं जीवन–शैली में होने वाले परिवर्तनों तथा आधुनिकता के दबाव से उदीयमान नारी–चेतना का सूक्ष्म विश्लेषण इस उपन्यास की दूसरी बड़ी उपलब्धि है।"[3]

'पीली आँधी' प्रभा खेतान की गम्भीर, प्रौढ़ और क्लासिक कथाकृति है। इसका शीर्षक एक अर्थवान प्रतीक है। "कोई अकाल आता है, कोई बाढ़ आती है, कोई भूचाल होता है– ऐसा कुछ होना तहस–नहस करने के लिए पर्याप्त होता है। परन्तु इन सबके बावजूद जिस तरह मानवीय बीच पुनः अंकुरित और प्रस्फुटित होकर बाहर उदीयमान होता है और धीरे–धीरे जिस तरह वह बड़ा होकर पुनः आच्छादित हो उठता है। कुछ इसी तरह 'पीली आँधी' का संकेतन भी है। सब कुछ उखाड़ देने वाली 'पीली आँधी' का कालान्तर में शमन होता है। दहकता अतीत, शान्त और शीतल वर्तमान में बदल उठता है।"[4]

सन् 1999 में प्रकाशित 'स्त्रीपक्ष' प्रभा खेतान का बहुपठित उपन्यास नहीं है। यह 'पीली आँधी' और 'छिन्नमस्ता' की तरह कभी चर्चा में नहीं रहा है। 'स्त्रीपक्ष' में स्त्री के अर्थ को समझाने की कोशिश की गयी है। शिक्षा, राजनीति परिवार, समाज, मित्र तथा शेष दूसरे जीवन सम्बन्धी जरूरी सरोकार इस कृति में जुड़ते–मिटते और खण्डित होते दिखलाई पड़ते हैं। बत्तीस वर्षीया वृन्दा के जीवन में पच्चीस वर्षीय पेन्टर आर्जव असंगत–जीवन मित्र के रूप में आता है। वृन्दा के जीवन में तमाम उधेड़बुन यहीं से शुरु होते हैं। अतीत के उतार–चढ़ाव वर्तमान के द्वन्द्व और भविष्य के तमाम सन्देह आत्ममन्थन के लिए विवश कर देते हैं। वह अपने आर्थिक सरोकारों को अब आवश्यक समझने लगती हैं। विवाह–संस्था को 'ओवरडेटेड' मानती हुई प्रभा खेतान ने 'स्त्रीपक्ष' नामक अपने उपन्यास में स्त्री की आर्थिक सुरक्षा को समकालीन स्त्री जीवन के लिए अत्यन्त जरूरी माना है। जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि प्रभा खेतान स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों और उनके अन्तर्विरोधों से बखूबी परिचित हो चुकी थीं। उनकी यह इच्छा थी कि– "एक बार प्रभावी रूप से स्त्री अपने हक में राजनैतिक सिद्धान्तों से ऊपर उठकर कुछ करने की हिम्मत तो करे, एक बार पुरुषों की सत्ता और वर्चस्व को चुनौती देकर यह तो पूछे कि उन सामाजिक पूर्वाग्रहों का क्या किया जाए, उस पुरुष मानसिकता का कैसे उन्मूलन हो, जो अपने लिए तो हम लोग, शब्द का व्यवहार करता है मगर 'औरत' को 'ये औरतें' कहकर गरियाने से बाज नहीं आता।"[5]

प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी विभिन्न भूमिकाओं में साक्षीकृत हुई है। कहीं माँ के रूप में तो कहीं बेटी के रूप में कहीं बहन की भूमिका में उसे खड़ा किया गया है तो कहीं पत्नी की भूमिका में। सास की भूमिका में प्रस्तुत हुई प्रभा खेतान की नारी कमजोर नहीं है। आदर्श जोड़ी, समर्पित प्रेमिका के साथ–साथ विद्रोहिणी नारी भी प्रभा खेतान की स्त्री बनती रही है। देवरानी–जेठानी, ननद–भाभी, सेविका–सखी और इसी तरह पारिवारिक संदर्भों से जुड़ी हुई उसकी दूसरी भूमिकाएँ भी देखी जा सकती हैं। प्रभा खेतान के उपन्यासों की नारी चाहे जिस भूमिका में प्रस्तुत की गयी हो मगर अन्ततः वह एक संघर्षमयी नारी है। नई चुनौतियों को स्वीकार करने वाली नारी है। 'पीली आँधी' की सोमा की तरह छिन्नमस की प्रिया और अपने चेहरे की रमा वर्ग की स्थिति चरित्र, स्वभाव, शिक्षा, संस्कार और समग्रतः स्त्री व्यतिव को लेकर एक सी हैं। मुक्ति की महत्वाकांक्षा सभी में मिलती जुलती सी है। आज के बदलते संदर्भ में नारी की बदलती हुई मानसिकता को कथाभाषा में अनुस्यूत कर उसे बेबाकी के साथ प्रस्तुत करने वाली कथा लेखिका प्रभा खेतान समकालीन कथा लेखिकाओं में विशिष्ट पहचान बना चुकी है। उनकी स्त्री सिर्फ कलकत्ते और राजस्थान की मारवाड़ी स्त्री नहीं हैं। यानी सिर्फ हिन्दुस्तानी औरत नहीं हैं, अपितु वैश्विक स्तर पर अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत स्त्री हैं। वह भारतीय स्त्री है, अमेरिकन स्त्री है, चाइनीज स्त्री है, दुनिया की स्त्री है। प्रभा खेतान के सम्पूर्ण और औपन्यासिक कृतित्व के आधर पर कह सकते हैं कि उनकी नारी अपने सम्पूर्ण अस्तित्व की पुनर्खोज में संघर्षरत स्त्री है। आत्मपरीक्षण करने वाली स्त्री है। पुरुष से दो टूक विमर्श करने वाली स्त्री है। आत्मध्वंस के लिए आकुल स्त्री नहीं, अपितु आत्मनिर्माण के लिए पुलकित स्त्री है। पुरुष के वर्चस्व में आच्छादित वह स्त्री है, जो वहाँ से निकलकर स्वतंत्र आकाश की तलाश में है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रभा खेतान, स्त्री–विमर्श के अन्तर्विरोध, हंस, सितम्बर 1996.
2. आचार्य रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ 272.
3. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, 1993.
4. प्रभा खेतान, पीली आँधी, 1996.
5. प्रभा खेतान, स्त्री–विमर्श के अन्तर्विरोध, जून, हंस, 1996, पृ0 59.

*****